हिन्दी साहित्येतिहास में विद्यापति की लोकप्रियता का आधार उनकी पदावली है। इसमें भक्ति एवं शृंगार का चूप-छाँही मेल मिलता है। विद्यापति ने इसमें यद्यपि राधा और कृष्ण के प्रेम का चित्रण किया है, लेकिन एक बिंदु पर आकर राधा और कृष्ण जीवात्मा एवं परमात्मा के प्रतीक न रहकर लौकिक जगत् के प्रेमी और प्रेमिका बन जाते हैं। स्पष्टत: विद्यापति की पदावली की यात्रा अलौकिकता से शुरु होकर लौकिक धरातल पर आकर समाप्त हो जाती है। इसी कारण विद्यापति को लेकर एक अंतहीन विवाद शुरु हुआ और

Scanned with CamScanner

Scanned with OKEN Scanner

वह यह कि वे भक्त कवि हैं या शृंगारी। इस विवाद के हल तक पहुँचने में मूल समस्या यह है कि विद्यापति को भक्त मानने वाले आलोचक भी पदावली में मौजूद अलौकिक-शृंगारिक तत्वों की उपेक्षा नहीं कर पाते हैं और विद्यापति को शृंगारी मानने वाले कवि भी पदावली में मौजूद उस गहरी तन्मयता की अनदेखी नहीं कर पाते हैं जो पदावली को रोचकता के धरातल से उठाकर अलौकिकता के धरातल पर प्रतिष्ठित करती है। यही वह पृष्ठभूमि है जिसमें पदावली माधुर्य और शृंगार के बहाने भक्ति और शृंगार के बीच अद्भुत संतुलन साधती है।

विद्यापति पर कालिदास, माघ, श्रीहर्ष, भारवि, अमरुक आदि कवियों के शृंगारिक काव्यों का प्रभाव है। इसी प्रभाव के कारण विद्यापति ने राधा और कृष्ण के शृंगार चित्रण के क्रम में नख-शिख-वर्णन, नायिका-भेद संयोग एवं वियोग वर्णन के साथ-साथ मान आदि का साँगोपांग वर्णन किया है इसी कारण पदावली में राधा-कृष्ण अपना अलौकिक व्यक्तित्व को छोड़कर लौकिक व्यक्तियों के

समान प्रेम-भावना से विह्वल होते हैं।
वस्तुतः विद्यापति जयदेव के 'गीत गोविन्द' से प्रेरित होकर राधा-कृष्ण की केलि और प्रेम-लीला का चित्रण करते हैं। पदावली में राधा के वय: संधिकाल से लेकर उनके पूर्ण युवक-युवती रूप का विस्तार से चित्रण विद्यापति ने किया है। शृंगार का मन आदि शृंगार है वियोग पक्ष में रमा है तो विद्यापति का नियोग-वर्णन में। यही कारण है कि विद्यापति द्वारा चित्रित राधा-कृष्ण की प्रेम-लीला में शरीर-पक्ष की प्रधानता है और यह मांसलता विद्यापति-पदावली को दैहिक बनाती है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने विद्यापति की राधा का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए लिखा है "जहाँ चंडीदास के पदों में राधा के अत्यंत कोमल एवं सुकुमार हृदय का परिचय मिलता है, वहीं विद्यापति की राधा अधिक विलासवती एवं विदग्ध है"। विद्यापति की राधा की दैहिक परंपरा से यही निकटता उसे सूर की राधा से भिन्न बनाती है। जहाँ सूर के यहाँ राधा एवं

कृष्ण के प्रेम का विकास साहचर्य जनित है- 'लड़काई के प्रेम, कहो आलि कैसे छूटे' - सूर के यहाँ रूपाकर्षण से प्रेम की शुरुआत होती है, लगातार मिलते-जुलते रहने से यही रूपाकर्षण प्रेम के रूप में परिणत होता है, इसके विपरीत चंडीदास एवं विद्यापति की पदावली में पूर्व-राग की वह व्याकुल वेदना मौजूद है जो सूरसागर में मौजूद नहीं है।

विद्यापति ने राधा-कृष्ण के नेत्र-व्यापार का वर्णन करते हुए लिखा है - "बड़ कौसल तव राधे। किनल कन्हाईलोचन आधे॥" अर्थात् राधे तुम बड़ी चालाक हो। कन्हाई को तुमने आधी आँख के बदले खरीद लिया। विद्यापति की राधा जैसे ही तिरछी नजरों से कृष्ण की ओर देखती है तो कृष्ण राधा की इस अदा पर रीझ जाते हैं। निश्चय ही विद्यापति की राधा सूर की राधा की भाँति भोली-भाली सरल बालिका नहीं है वह निर्जन में अपने पयोधरों को देखकर आत्म-मुग्धता की दशा में पहुँच जाती है :-

"सैसव जौवन दुहु मिलि गेल।
स्रवनक पथ दुहु लोचन लेल।
निरजन उरज हेरत कत बेरि।
बिहुँसइए अपन पयोधर हेरि।"

इसी क्रम में विद्यापति का मन प्रथम समागम के चित्रण और उससे प्राप्त अनुभवों की अभिव्यक्ति पर आकर टिक जाता है। राधा अपने समागम का वर्णन इस भोले ढंग से करती है, जैसे उसे कुछ पता ही नहीं।—

"हँसी हँसी बहु आलिंगन देल।
मनमथ अंकुर कुसुमित भेल।
जब निबिबंध खसाओल कान।
तोहर सपथ हम किछु नहिं जान।"

राधा को संयोग का यह सुख वियोग के क्षणों में उसकी स्मृति पटल पर बार-बार कौंधता है। जहाँ सूर की राधा संयोग में सोलह आना संयोगमय और वियोग में सोलह आना वियोगमय है, वहीं विद्यापति की राधा को वियोग में भी पयोधर स्पर्श का सुख याद आता है :"कुच जुग संभु परसि कर बोललन्हि तें परतीति मोहि भेल।"

उपर्युक्त विवेचन से साफ हो जाता

है कि विद्यापति ने राधा और कृष्ण को अलौकिकता के धरातल से उतार कर लौकिक धरातल के प्रेमी-युगल के रूप में चित्रित किया है। इसी बात आचार्य शुक्ल ने विद्यापति को शृंगारी कवि मानते हुए लिखते हैं- "आजकल आध्यात्मिक रंग के चश्मे बहुत सस्ते हो गए हैं; उन्हें चढ़ाकर कुछ लोगों ने गीत-गोविन्द' के पदों में आध्यात्मिक संकेत बताया है, वैसे ही विद्यापति के इन पदों को भी। सूर आदि कृष्ण भक्तों के शृंगारी पदों की भी ऐसे लोग आध्यात्मिक व्याख्या चाहते हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी यह तो स्वीकार करते हैं कि विद्यापति की राधा अधिक विलासवती एवं विदग्धा है, लेकिन उसके साथ ही वह यह जोड़ना नहीं भूलते कि इससे सहृदय के चित्त में विकार नहीं उत्पन्न होता।

रामस्वरूप चतुर्वेदी ने पदावली की चर्चा करते हुए कहा है कि विद्यापति में लौकिक मर्यादा एवं शैव तादात्म्य आप दोनों